P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-IV* ISSUE-IV*December-2016
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

तुलसी की प्रगतिशील सामाजिक चेतना

पंकज कुमार
शोधार्थी,
हिन्दी विभाग,
एम.पी.जी.कालेज,
मसूरी, उत्तराखण्ड

सारांश

तुलसी पर दलित विरोधी और स्त्री विरोधी होने का जो आरोप लगाया जाता है उसे इस लेख में तुलसी के युग की सीमा बताया गया है न कि तुलसी की।

मुख्य शब्द : आधुनिक, प्रगतिशील, आलोचकों, रामचरितमानस

प्रस्तावना

आज जब वर्तमान उत्तर आधुनिक दौर में स्त्री विमर्श और दलित विमर्श की धूम मची हुयी है तब तुलसी जैसे गतिशील लोकोन्मुख परम्परा के बड़े कवि की नारी दृष्टि और दलित दृष्टि पर एक खुली बहस जरूरी हो जाती है क्योंकि आलोचकों ने तुलसी के नारी विरोधी और शूद्र विरोधी दृष्टिकोंण के आधार पर तुलसी के प्रगतिशील सामाजिक चेतना पर प्रश्न चिन्ह खड़ा किया है।

आलोचकों ने तुलसी की निम्न पंक्तियों को उनके वर्णाश्रम धर्म का समर्थक होने का प्रमाण माना है–

ढोल गँवार सूद्र पशु नारी। सकल ताड़ना के अधिकारी।।
पूजिए विप्र सील गुन हीना। सूद्र न गुन गन ज्ञान प्रवीना।।

यहाँ एक जगह तुलसी सूद्र और नारी को ढोल गँवार और पशु के समान रखते हुए उसे ताड़न अर्थात् डाँट–डपट का अधिकारी बताते हैं तो दूसरी जगह तुलसीदास जी कहते हैं कि पूजा ब्राम्हण की होनी चाहिए भले ही वह ज्ञान, शील और गुण से हीन हो, न कि उस सूद्र की जो ज्ञान और गुण से प्रवीन हो। इसी तरह–

नारी सुझाव सत्य कवि कहहिं। अवगुन आठ सदा उर रहहि।।
जिमि स्वतंत्र भइ बिगड़हिं नारी, शिव के कथन– सुतहिं सति तव नारी समाउ,

शबरी का कथन 'अधम ते अति नारी' और भरत के कथन सकल झपट अग अवगुन खानिः को उधृत करते हुए तुलसी को नारी विरोधी शक्ति करने का प्रयास किया जाता है। इन पंक्तियों को आधार बनाकर तुलसी के प्रगतिशील सामाजिक चेतना पर प्रश्न चिन्ह लगाने और उन पर शूद्र और नारी विरोधी होने का आरोप चस्पा करने से पूर्व हमें एक बार यह सोचना चाहिए कि क्या किसी रचनाकार के बारे में मत का निर्धारण उस रचना में शामिल दो चार पंक्तियों के आधार पर किया जाना उचित है, या उसके सन्दर्भ में कोई भी निर्णय देने से पहले हमें रचना में उभरकर आई समग्र रचना दृष्टि को ध्यान रखना चाहिए? दूसरी बात क्या किसी व्यक्ति को उसकी पृष्ठभूमि उसके परिवेश और उसके सन्दर्भों से पूरी तरह अलग करके देखा जा सकता है तीसरी बात यह कि क्या तुलसी की मूल रचना दृष्टि से इन पंक्तियों का मेल बैठता है? चौथी बात यह कि निश्चय ही रामच.रित मानस तुलसी की सर्वाधिक महत्वपूर्ण रचना है, लेकिन एकमात्र रचना नहीं।

इसलिए तुलसी के सन्दर्भ में कोई भी निर्णय देने से पहले उन पंक्तियों को न केवल संदर्भ के साथ जोड़कर देखे जाने की जरूरत है, वरन् तुलसी की अन्य रचनाओं कवितावली, दोहावली, विनय पत्रिका, हनुमान बाहुक को भी ध्यान में रखा जाना चहिए।

तुलसी के आलोचकों के द्वारा 'रामचरितमानस के आधार पर प्रतिक्रियावादी करार दिया गया है जिसके जरिये तुलसी ने अपने युग की समस्याओं का उत्तर पाना चाहा और तत्कालीन व्यवस्था के समक्ष एक विकल्प प्रस्तुत करना चाहा। उसी समय 'रामचरितमानस' में केवट का निषाद होना राम द्वारा केवट को गले लगाने के कार्य में अवरोध उत्पन्न नहीं करता, उसी रामचरित मानस में शबरी का भीलनी और बुरी होना उसके जूठे बेर खाने से राम को नहीं रोकता। क्या तुलसी के राम के समक्ष यह विकल्प नहीं था कि वे सीता हरण के पश्चात् विलाप करने के बजाए, बानर, भालुओं की सेना इकट्ठा करने के बजाए युगीन मान्यताओं के अनुरूप कई सीताओं को घर ले आते या

फिर जिस कैकेयी के कारण उन्हें वनवास भोगना पड़ा, चित्रकूट प्रसंग में उस कैकेयी की उपेक्षा कर जाते, लेकिन नही क्योंकि तुलसी का मानना है–

सब मम प्रिय सब मम उपजाए। सबसे अधिक मनुज मोहि भाए अर्थात् मनुष्य ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ कृति है और राम अपनी इस सर्वश्रेष्ठ रचना से सबसे अधिक प्यार करते हैं। इस लिए चित्रकूट प्रसंग में राम सबसे पहले कैकेयी से मिलकर उसे अपने अनुपात से मुक्त करते है।

इसी प्रकार सीता हरण प्रसंग में राम विलाप करते हुए बन का एक–एक कोना द्यान मारते हैं। इसी राम ने नारी की पराधीन दशा को देखकर कहा है–

कत विधि सृजी नारी जग माहीं। पराधीन सपनेहु सुख नाहीं।।

स्पष्ट है कि उपरोक्त विवादास्पद पंक्तियों का तुलसी की मूल रचना दृष्टि से मेल नहीं बैठता है। यहाँ पर एक बात और देखने लायक है जिसका सम्बन्ध तुलसी से है। तुलसी के बारे में यह लोक कथा प्रचलित है कि तुलसी अपनी पत्नी के प्रति इतने आसक्त थे कि उसके मायके चले जाने पर बिना बुलाये उसके पीछे–पीछे अपने ससुराल चले गये थे। यहाँ प्रश्न यह उठता है कि जो व्यक्ति स्वयं नारी के प्रति इतना आसक्त रहा हो और जिसके व्यक्तित्व के निर्माण में नारी की इतनी महत्वपूर्ण भूमिका रही हो, ऐसा व्याक्ति नारी–विरोधी कैसे हो सकता है? तुलसी ने राम के प्रति अपनी भक्ति की तीव्रता को स्पष्ट करने के लिए इस–रूपक का सहारा लिया।

कामिहि नारि पियारि जिमि। लोभिहिं प्रिय जिमि दाम।।
तिमि रघुनाथ निरंतरहि। प्रिय लागहुँ मोहि राम।।

अर्थात् हे राम तुम मेरे लिए उतने ही प्यारे हो जितनी प्यारी एक कामी व्यक्ति के लिए नारी होती है और जितना प्यारा लोभी व्यक्ति के लिए धन होता है। अब यहाँ पर यह सहज ही प्रश्न उठता है कि यदि उपरोक्त पंक्तियों का तुलसी की मूल रचना दृष्टि से मेल नहीं बैठता है, तो फिर उसकी उपस्थिति का आशय क्या है? इस सन्दर्भ में ध्यान रखा जाना चाहिए कि हर रचनाकार अपने युग और परिवेश की उपज होता है और इसीलिए उसकी रचनाओं के भीतर युग के अन्तर्विरोध बोलते हैं।

उपरोक्त पंक्तियों के जरिये नारी के प्रति जिस सोच को अभिव्यक्ति मिलती है, वह तुलसी की अपनी सोंच नहीं, उस युग और समाज की सोंच है जिसमें रहकर तुलसी रचना करते हैं और यहाँ उनकी वाणी के जरिये उनके युग और समाज का अन्तर्विरोध बोलता है।

जहाँ तक तुलसी की शूद्र विरोधी दृष्टि का प्रश्न है तो इसका भी तुलसी की मूल रचना दृष्टि से मेल नहीं बैठता। रामराज्य के प्रसंग में हमने देखा कि तुलसी के द्वारा वर्णाश्रम धर्म का समर्थन मर्यादावाद और व्यवस्थावाद के लिए है। अयोध्या के सरयू नदी पर बने राजघाट के प्रसंग में देखा कि इसमें पर्याप्त लोचशीलता है। 'मानस' में भी ऐसे अनेक उदाहरण मौजूद हैं। इस सन्दर्भ में आलोचकों ने तुलसी के शूद्र विरोधी दृष्टिकोंण को उनकी उच्च जातीय पृष्ठिभूमि से जोड़कर देखना चाहा, लेकिन वहीं तुलसी जब 'कवितावली' में आते हैं, तो कहते हैं–

धूत कहौं, अवधूत कहौ ।
राजपूत कहौ जोलहा कहौ कोऊ।।
काहू की बेटी सो बेटा न व्याहब।
काहू कि जाति बिगारौं न सोऊ।।
तुलसी सरनाम गुलाम हैं राम को।
जाकौ रूचै, सो कहौं कछु कोऊ।।
माँगि के खइबो, मसिति पे सौइबो।
न लेबे को एक न देबे को दोऊ।।

तुलसी का जन्म ब्राम्हण परिवार में अवश्य हुआ लेकिन अपने रक्त सम्बन्धियों और परिवार से उन्हें उपेक्षा मिली और जब उनकी आँखें खुली तो उन्होनें अपने को भिखमंगों की टोली में पाया हाथ फैलाया, जहाँ से जो मिला खा लिया, जहाँ पर दो गज जमीन मिली सो लिया, कभी यह जानने का प्रयास नहीं किया कि देने वाला ब्राम्हण है या शूद्र, हिन्दू है या मुसलमान। तुलसी ने स्पष्ट रूप से यह घोषणा की–

मेरे जाति–पांति न चहौं काहू की जाति–पांति।

अर्थात् न तो मेरी अपनी कोई जाति है और न मैं किसी दूसरे की जाति जानने का इच्छुक हूँ इसकी पुष्टि तुलसी की रचना दृष्टि करती है जो मानवतावादी चेतना पर आधारित। लेकिन यह भी सच है कि तुलसी जिस परिवार, समाज और परिवेश की उपज थे वहाँ वर्ण व्यवस्था उनके लिउ उतनी बड़ी समस्या नहीं थी जितनी बड़ी आर्थिक विषमता इसीलिए पूरे मध्यकाल के दौरान आर्थिक वैषम्य पर जो प्रहार तुलसी के द्वारा किया गया है वह अन्यत्र नहीं मिलता।

उद्देश्य

वर्तमान में दलित विमर्श और स्त्री विमर्श पर शोधकार्य बहुत द्रुत गति से चल रहा है तो एसे में शोधार्थियों को तुलसी की प्रगतिशील सामाजिक दृष्टि से साक्षात्कार करवाना इस लेख का उद्देश्य है और सुधी पाठक इसे आत्मसात करके भारतीय समाज में समरसता का संचार कर सकते हैं जो भारत के विविधापूर्ण समाज को नई दिशा दे सकता है और भारतीय संविधान में उल्लिखित समता को समाज में स्थापित करने की दिशा में इस एक प्रयास समझाा जाना चाहिए।

निष्कर्ष

तुलसी की समग्र रचनाओं पर दृष्टिपात करने के उपरान्त यह बात छनकर सामने आती है कि तुलसी की दृष्टि में नारी और दलित का आसन ऊपर है जहाँ पर कुछ विवादास्पद पंक्तियाँ आई हैं वे तुलसी के युग की सीमा है न कि तुलसी की। तुलसी के आलोचक तुलसी के दलित विरोधी और स्त्री विरोधी सिद्ध करने के लिए जिन पंक्तियों को उधृत करते हैं वे रामचरित मानस से ली गई हे जो तुलसी की एकमात्र रचना नहीं हैं।

अतः तुलसी की सामाजिक चेतना को समझने कें लिए उनकी रचनाओं की समग्रता तथा रचनादृष्टि की समग्रता आवश्यक है नहीं तो तुलसी के साथ न्याय नहीं किया सकता।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. रामचरित मानस, गोरखपुर प्रेस
2. कवितावली, गोरखपुर प्रेस
3. दोहावली '' ''

4. विनय पत्रिका '' ''
5. हनुमान बाहुक '' ''
6. 'त्रिवेणी' –आचार्य रामचन्द्र शुक्ल,
7. तुलसी– सं उदयभान सिंह राधाकृष्ण प्रकाशन
8. तुलसीदास– नंदकिशोर नवल, राजकमल प्रकाशन
9. हिंदी साहित्य का इतिहास – कुमार सर्वेग, सार्थक प्रकाशन दिल्ली
10. 'विविधा' डॉ करुणाशंकर उपाध्याय, भास्कर प्रकाशन कानपुर